Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 2, February-2019, ISSN 2230-7540

प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों में सांस्कृतिक गुणबोध

Naresh Kumar*

M.A. (Hindi) Kurukshetra University, Kurukshetra

सार – संस्कृति का सामान्य अर्थ है- संस्कार, शुद्धता, परिष्कृत। किसी भी जाति व राष्ट्र की वे सब बातें जो उसके मन, रुचि, आचार-विचार, कला, कौशल एवं सभ्यता के क्षेत्र में बौद्धिक विकास की सूचक रहती है। वे सब संस्कृति के अंतर्गत आती हैं।

साहित्य और संस्कृति का सम्बन्ध बहुत गहरा होता है। बिना संस्कृति के कोई भी अच्छा साहित्य नहीं रचा जा सकता है। साहित्य ही किसी भी समाज का, उसके काल का सर्वाधिक प्रमाणिक व विश्वस्त आधार होता है। किसी भी संस्कृति का समाज पर गहरा प्रभाव होता है। संस्कृति जीवन का तरीका है। वह तरीका जमा होकर समाज पर छाया रहता है। जिसमें हम जन्म लेते हैं।

संस्कृति का निर्माण बहुत सी बातों से मिलकर होता है। संस्कृति ज्ञान, विश्वास, नैतिकता, रीति-रिवाज तथा अन्य प्रकृतियाँ जो मनुष्य समाज का सदस्य होने के कारण अर्जित करता है। इन सबका मिश्रण है। संस्कृति के अंतर्गत रहन-सहन, राष्ट्रीयता, मूल्यबोध, सौंदर्यकला, रीति-रिवाज, लोकपर्व आदि तत्व आते हैं।

----------X----------

प्रतापनारायण श्रीवास्तव अपने युग और समाज के प्रति सर्वाधिक संवेदनशील रहे हैं। उनका साहित्य आधुनिक काल की सामाजिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय गतिविधियों का दर्पण है। श्री प्रतापनारायण के उपन्यासों को पढ़कर पाठक को उनके समय के भारत का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है। यदि प्रेमचंद ने भारत के ग्रामीण जीवन का अंकन किया है तो प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने भारत के शहरी और ग्रामीण दोनों प्रकार का वर्णन किया है। उनके उपन्यासों में विवाह, सौंदर्य बोध, राष्ट्रीयता, मातृत्व, रीति-रिवाज, खानपान तथा प्रेम के विषय भरे पड़े हैं। उन्हें अपने उपन्यासों में सामाजिक कुरीतियों को अच्छी तरह उजागर किया है। समाज में व्याप्त विविध बुराइयों को उन्होंने प्रमुखता से उठाया है। कुछ हद तक इन्होंने इनको दूर करने का भी प्रयास किया है।

विवाह:

विवाह प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता और संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है। आदि काल से लेकर आज तक विवाह की रीती को मान्यता मिली हुई है। यदि बिना विवाह के कोई युगल समाज में साथ-साथ रहता है, तो हमारा समाज उनका विरोध करता है और उसे संस्कृति के खिलाफ बताता है। श्रीवास्तव के उपन्यासों में हम देखते हैं कि किस प्रकार उनके पात्र सामाजिक रीतियों में रहकर विवाह बंधन में बंध जाते हैं और जीवन पर्यंत उसका पालन भी करते हैं।

उनका उपन्यास 'बयालिस' एक खास उदेश्य को लेकर चलता है। लेकिन उसमें विवाह पद्धति का भी वर्णन है। उपन्यास की दो नारी पात्र गुलाब व नसीब है। उनके युवा होने पर माता-पिता को विवाह की चिंता हो जाती है। इसलिए इन दोनों लड़कियों की माताएं को आपस में सहेलियां हैं, उनके विवाह को लेकर आपस में बातचीत करती है कि उनकी लड़कियाँ विवाह के योग्य हों गई है, "इन दोनों का विवाह अब होना चाहिए और शीघ्र ही उनका प्रबंध होना आवश्यक है, नसीब ने गंगा के साथ मिलकर यह स्थिर किया कि वह अपने पति से इस विषय को छेड़ेगी।"1

इस प्रकार हमारी सभ्यता के अनुरूप नसीबन और गंगा अपनी लड़कियों के विवाह की चिंता करती हैं।

www.ignited.in

नसीब अपने पति रहीम को खाना परोसते हुए कहती है, "क्या आजकल इतना काम है कि जरा भी अवकाश नहीं मिलता।"2

इसी प्रकार श्रीवास्तव के उपन्यास 'वीरागिनी' को देखकर पता चलता है कि उस समय के विवाह में वर्तमान काल की तरह ही रुपए पैसे खूब खर्च किए जाते हैं, परंतु उस समय बारात कुछ दिन तक वधू पक्ष के घर ही रूकती थी। पात्र 'भुवनेश्वरी' का जब विवाह होता है तो उसके पिता बृजनंदन सहाय उसके विवाह में दिल खोलकर खर्च करते हैं और वर पक्ष को एक हफ्ते तक अपने घर ठहराते हैं। "बृजनंदन सहाय, उसके पिता ने दिल खोलकर खर्च किया था, बारातियों को एक सप्ताह तक टिकाए रहे। अनेक प्रकार के व्यंजनों से उनका मन आल्हादित करते रहे।"3

भारतीय संस्कृति में प्रत्येक स्त्री को विवाह अवश्य करना पड़ता है। इसकी स्पष्ट छाप डॉ॰ नीलकंठ के द्वारा दिए गए वक्तव्य से मिलती है। "हिंदू समाज में रहकर, विवाह तो करना ही पड़ता है।"4

मातृत्व:

मां की भूमिका साहित्य में एक अहम भूमिका के रूप में प्राचीन काल से ही रही है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यास भी माँ को अहम भूमिका प्रदान करते हैं। यदि यह कहा जाए कि इनके उपन्यास बिना माँ के अधूरे हैं, तो गलत नहीं होगा। भारतीय संस्कृति में माँ की एक अलग पहचान रही है। बिना माँ के परिवार अधूरा होता है। प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचंद ने भी माँ की भूमिका के लिए इनकी भूरी-भूरी प्रशंसा की है। श्रीवास्तव जी लिखते हैं, ''आज भी मुझे भली भांति स्मरण है, जब मेरे प्रथम उपन्यास 'विदा' को पढ़कर प्रेमचंद जी ने कहा था। इसमें माँ के जिस चारित्रिक स्वरूप की उद्भावना हुई है, वह अनुपम है, अविस्मरणीय है।"5

प्रेमचंद के इन शब्दों से प्रतापनारायण श्रीवास्तव इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने माँ के ऊपर पूरा उपन्यास 'वरदान' ही लिख डाला।

समाज में माँ की अत्यधिक गरिमा रही है, उसे गुरु व पिता से अधिक ऊँचा दर्जा प्रदान किया गया है। उपन्यास 'वरदान' माँ की महिमा के इर्द-गिर्द ही घूमता है। उपन्यास की नारी पात्र रागिनी अपने घर की रीती-रिवाजों से कुढ़ती रहती है। वह पाश्चात्य संस्कृति को अधिक महत्व देती है। रागिनी की सास विनीता भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है। इसलिए रागिनी को समझाते हुए उसका पति अतुल कहता है, "माँ का प्यार ही मेरे लिए सब कुछ है। उसके उत्सर्ग का प्रतिदान असंभव है। माँ के ममत्व की एक बूंद अमृत के समुंदर से भी अधिक कल्याणकारी होती है। वह माँ है, देवी है, कल्याणी है।"6

मां का एक बड़ा गुण रहा है कि बच्चे चाहे कितने भी बड़े क्यों न हो जाए वे मां-बाप की नजरों में सदैव बच्चे ही रहते हैं। विनीता अपने बेटे अतुल को कहती है कि "पुत्र माँ की दृष्टि में सदा बच्चा ही रहता है।"7

उपन्यास 'बयालिस' की नारी पात्र शारदा भी एक ऐसी ही माँ है, जो अपने बच्चों पर पति के बीच सामंजस्य स्थापित करने की कोशिश करती रहती है। माँ के रूप में उसकी भूमिका महत्वपूर्ण बन पड़ी है।

भारतीय संस्कृति का समर्थन:

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी मूलतः भारतीय संस्कृति की आख्याता है। उनकी हिंदू धर्म सभ्यता और संस्कृति के प्रति गहरी आस्था और विश्वास है। जो कि विभिन्न साहित्यिक कृतियों के माध्यम से व्यक्त हुआ है।

'विदा' उपन्यास में शांता, चपला और लज्जावती और निर्मल चंद का चरित्र भारतीय संस्कृति के अनुकूल है। शांता एक आदर्श नारी है, जो अपनी अभिमानिवी बहू कुमुदिनी के द्वारा अपमानित होने पर भी मन में क्रोध नहीं लाती, उसके संग पूर्ववत स्नेहमय व्यवहार करती है। उसका चरित्र एक आदर्श मां का है, को स्वयं कष्ट सहकर भी संतान को सुखी देखना चाहती है।

'वेदना' उपन्यास में भी अतिथि सत्कार की भावना का चित्रण अत्यंत सुंदर ढंग से हुआ है। जलपान के लिए अरुणा प्रभा के रोकने पर ज्योतिर्मयी कहती है- "महाराज रामचंद्र ने शबरी के बेर भूख के कारण नहीं खाए थे। भगवान कृष्ण ने भूख के विदुर के घर में साग-पात नहीं खाया था। बहिन जी ! आपके अनुकूल मैं आपकी सेवा नहीं कर सकती, क्योंकि मेरी न उतनी सामर्थ्य है और न ही मेरे पास इतने साधन परन्तु मेरा प्रेम और स्नेह तो है ही, उसको यदि आप ठुकरा सकती हैं, तब मैं मन मार कर रह जाऊंगी।"8

मानव मूल्यों का विवेचन:

उपन्यास और नैतिकता का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। समाज अपनी समस्त क्षमताओं और हीनता के साथ उपन्यास में प्रतिबिंबित हो उठता है। साहित्यकार की कृतियों पर उसके चिंतन के स्पष्ट प्रभाव को स्वीकार करते हुए

www.ignited.in

प्रेमचंद ने लिखा है "वास्तव में कोई रचना रचयिता के मनोभावों का उसके चरित्र का, उसके जीवन आदर्श का, उसके दर्शन का, आईना होता है।"9

श्रीवास्तव जी को मानव मात्र से प्रेम है। मानव प्रेम के समक्ष उनके लिए धन और वैभव पुलिंदा और श्रेष्ठता की चमक-दमक फीकी पड़ गई थी, इसीलिए मानव प्रेम के धरातल पर खड़े होकर मानव जीवन के जो चित्र उन्होंने अपनी कल्पना का साक्षय लेकर अंकित किए हैं, उनमें गहराई हैं, गहनता है, गंभीरता है, सच्चाई है और साथ ही व्यापकता भी।

उपन्यास 'विकास' में पात्र डॉ॰ नीलकंठ कहते हैं "वर्ग व्यवस्था जिस समय स्थापित हो गई थी, वह समय कुछ और था और इसके कुछ और ही अर्थ थे, इसका कार्य भी कुछ दूसरा ही था, परन्तु वह तो आज एक दूसरे रूप में यहाँ अपना अधिकार जमा हुए हैं, जिसका नाश परम आवश्यक है।"10

'विषमुखी' उपन्यास में भी लेखक ने त्वचा के रंग के आधार पर भेद की जाने की प्रवृत्ति का खंडन किया है और कहा है कि सर्वत्र मानवता मूल्य एक ही है। "सभी जगह मानवता का एक ही रूप है। रंगों का भेद केवल चमडे तक सीमित है। इन रंग-बिरंगे चमड़ो के भीतर बसने वाली भावनाएं त॰ सर्वत्र एक है। रंज मात्र भी भेद नहीं है। भेद की सृष्टि केवल स्वार्थ करती है।"11

'बयालिस' उपन्यास में श्रीवास्तव जी ने इसी विचार को लिया है और विचार-विमर्श के उपरांत इस भेदभाव को निरर्थक ठहराया है।

स्वातंत्र्य बोध:

स्वतंत्रता किसी भी व्यक्ति, प्राणी, देश के लिए उतनी ही आवश्यक होती है, जितनी की जीवित रहने के लिए हवा, पानी, भोजन इत्यादि की। बिना स्वतंत्रता के कोई व्यक्ति या देश उन्नति नहीं कर सकता।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव ने अपने विभिन्न उपन्यासों में दर्शाया है कि किस प्रकार अंग्रेज लोग स्वतंत्र होकर भारतीयों पर अत्याचार करते हैं। 'विहान' उपन्यास में 1857 की क्रांति के कुछ दृश्य दर्शाने का प्रयास लेखक ने किया है।

नानासाहेब, लक्ष्मीबाई के वार्ता के दौरान बताते हैं कि लॉर्ड डलहौजी अपनी नीतियों को संपूर्ण भारत पर अधिकार कर लेना चाहता है "वह समस्त भारत को अपने अधीन करने का स्वपन देख रहा है। अवैध से अवैध उपाय प्रयोग करता है, किंतु उन्हें अपने तरफ से वैध बना देता है।"12

मूल्य बोध:

मनुष्य चाहे समाज में रहता हो या जंगल में उसे एक दूसरे पर निर्भर रहना पड़ता है। कई बार मनुष्य बिना किसी स्वार्थ के दूसरों की मदद कर देता है। वो मूल्य होते हैं। प्राचीन काल से भारतीय सभ्यता संस्कृति में मूल्यबोध का बड़ा महत्व रहा है। प्रतापनारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों में भी मूल्यबोध का बहुत महत्व रहा है। 'बयालिस' उपन्यास में पुरुष पात्र रहीम एक ऐसे ही व्यक्ति हैं, जो बिना किसी स्वार्थ के समस्त गांव वालों की सहायता करते हैं। उनकी इसी भलमानसता के कारण गांव के सभी छोटे-बड़े व्यक्ति उसे रहीम काका के नाम से संबोधित करते हैं। गंगा की पुत्री गुलाब रहीम काका की बेटी नसीम से यही सब कहती है, "अम्मा कहती थी कि जब बापू मरे थे तब कोई हमारे पास नहीं आया था। प्लेग बड़ी छूत की बीमारी होती है, उससे सब लोग दूर रहना चाहते हैं। उस समय रहीत काका ही तो गांव वालों को जाकर लाए थे और बापू की तब अंत्येष्टि क्रिया हुई थी।"13

राष्ट्रीयता:

प्रतापनारायण श्रीवास्तव राष्ट्र, जनता और धरती के लेखक हैं। राष्ट्र, जनता तथा धरती उनके लिए अमूर्त न होकर एकदम सगुण साकार है।

श्रीवास्तव जी ने उपन्यास 'विहान' में बताया है कि 1857 की क्रांति के बाद भारत वर्ष की अपनी सीमाएं निश्चित की गई "जो भारत देश छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित था, वह एक राष्ट्र में उभरकर संसार के राष्ट्रों की श्रेणियों में आया।" 1857 की क्रांति के कारण लोगों में देश भक्ति की भावना पैदा हुई और समुचित देश में एक राष्ट्रीयता की लहर दौड़ गई। सभी व्यक्ति एक दूसरे से जुड़ा हुआ महसूस करने लगे। "उन्होंने अब उतरी भारत दिल्ली से लेकर कोलकाता तक की जनता और नरेशों को एक सूत्र में आबद्ध किया।"14

उपन्यास 'बयालिस' के अनेक पत्र राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत है। पुरुष पत्र सुरेंद्र, विक्रम सिंह भी राष्ट्रीयता की भावना से भरे हुए हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि संस्कृति समाज सापेक्ष होती है, सामाजिक परिवर्तन के साथ साथ दृष्टि के मनुष्यों की आस्थाएं, मान्यताएं, एवं परंपराएं भी परिवर्तित होती हैं।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव जी के उपन्यासों में ये सभी प्रभावी रूप से दिखाई देता है।

संदर्भ सूची

1. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, बयालिस, पृष्ठ संख्या: 12
2. उपरिकृत, पृष्ठ संख्या: 13
3. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, विरागिनी, पृष्ठ संख्या: 16, 20
4. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, विकास, पृष्ठ संख्या: 80
5. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, विदा, भुमिका से
6. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, वरदान, पृष्ठ संख्या: 133
7. उपरिकृत, पृष्ठ संख्या: 136
8. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, वेदना, पृष्ठ संख्या: 410
9. प्रेमचंद, कुछ विचार, सरस्वती प्रैस बनारस, 1956, पृष्ठ संख्या: 70
10. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, विकास, पृष्ठ संख्या: 38
11. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, विषमुखी, पृष्ठ संख्या: 289
12. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, विहान, पृष्ठ संख्या: 21
13. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, बयालिस, पृष्ठ संख्या: 32
14. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, विहान, पृष्ठ संख्या: 29

Corresponding Author

Naresh Kumar*

M.A. (Hindi) Kurukshetra University, Kurukshetra

nareshlohchab2019@gmail.com